इकाई–5

(वैदिक साहित्य का परिचय)

इकाई का रूपरेखा–

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 वैदिक संहितायें

5.4 प्रमुख ब्राह्मण ग्रन्थ

5.5 षड्वेदांग

5.6 सूत्र साहित्य

5.7 वेदों का रचनाकाल

5.1 उद्देश्य–

इस इकाई के अध्ययन से आप सम्पूर्ण वैदिक साहित्य का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर सकेगें। जिसमें वैदिक संहितायें, प्रमुख ब्राह्मण ग्रन्थ, षड्वेदांग, सूत्र साहित्य, वेदों का रचनाकाल, आरण्यक साहित्य का परिचय प्रस्तुत किया गया है।

5.2 प्रस्तावना–

इस इकाई में वैदिक संहिताओं के अन्तर्गत (ऋक, यजु, साम, अथर्व) संहिताओं का परिचय प्राप्त कर सकेंगे। वेदानुसार ब्राह्मणों का वर्गीकरण का परिचय प्राप्त कर सकेंगे। षडवेदांगों में (शिक्षा, व्याकरण, छन्द, निरुक्त, ज्योतिष, कल्प) का वर्णन किया गया है। सूत्र साहित्य के अन्तर्गत श्रौत सूत्र, गृह्य सूत्र, धर्म सूत्र, शुल्ब सूत्र को प्रस्तुत किया गया है।

वेदों का रचनाकाल के अन्तर्गत मैक्समूलर का मत, दीक्षित का मत, लोकमान्य तिलक का मत, शिलालेखों से प्राप्त सूचना को प्रस्तुत किया गया है। आरण्यक साहित्य के अन्तर्गत ऋग्वेदीय आरण्यक, यजुर्वेदीय आरण्यक, सामवेदीय आरण्यक, अथर्ववेदीय आरण्यक को प्रस्तुत किया गया है। यह परिचयात्मक प्रस्तुति आपका ज्ञान संवर्धन करेगी।

5.3 वैदिक संहिताओं का परिचय–

ऋग्वेद–

ऋच् (ऋक) का अर्थ है– स्तुतिपरक मंत्र। **ऋच्यते स्तूयतेऽनया इति ऋक्।** ऋग्वेद में विभिन्न देवों की स्तुति का यथा सम्भव निर्देश है। ऋचाओं के द्वारा उन देवों का आह्वान किया जाता है। ऐसी ऋचाओं के संग्रह के कारण इसका नाम ऋग्वेद–संहिता पड़ा।

यह ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण होने के साथ ही चारों वेदों में सबसे विशालकाय ग्रन्थ है। यजु, साम और अथर्व तीनों मिलकर भी इससे न्यून है।

इसका विभाजन दो प्रकार से किया गया है।

1. मंडल, अनुवाक, सूक्त और मंत्र।
2. अष्टक्, अध्याय, वर्ग और मंत्र। इनमें से मण्डल वाला क्रम अधिक उपयुक्त और प्रचलित है। इसमें देवता के अनुसार सूक्तों का विभाजन है। अष्टक् वाला विभाजन संख्या और गणना की दृष्टि से

सुन्दर है। इसमें पूरे ऋग्वेद को 8 समान भागों में बाँटा गया हैं, इन्हें अष्टक्' कहते हैं। प्रत्येक अष्टक में 8 अध्याय हैं, अतः पूरे ऋग्वेद में 8ग8त्र64 अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय में वर्गों की संख्या भिन्न है, यह संख्या 25 से लेकर 49 तक है। प्रत्येक वर्ग में मंत्रों की संख्या प्रायः 5 है। अष्टकों में अध्यायों की संख्या भी भिन्न है। वह 221 से लेकर 331 तक है। इस प्रकार ऋग्वेद में 8 अष्टक्, 64 अध्याय, 2024 वर्ग और 10,552 मंत्र हैं।

ऋषि और देवता के अनुसार ऋग्वेद को 10 मंडलों में विभक्त किया गया है। इसमें 85 अनुवाक्, 1028 सूक्त और 10,552 मंत्र हैं। इसमें 11 बालखिल्य सूक्तों के 80 मंत्र भी सम्मिलित हैं।

यजुर्वेद–

यजुस् का अर्थ–

यजुर्वेद के यजुस् शब्द की कई व्याख्याएँ हैं, जो विभिन्न दृष्टिकोण से प्रस्तुत की गई हैं। यजुस् के मुख्य अर्थ हैं– 1. यजुर्यजतेः, यज्ञ–सम्बन्धी मंत्रों को यजुस् कहते हैं।

यजुर्वेद की शाखाएँ–

यजुर्वेद मुख्यतयः दो भागों में विभक्त है–**1. शुक्ल यजुर्वेद, 2. कृष्ण यजुर्वेद।**

1. शुक्ल यजुर्वेद को ही माध्यन्दिन एवं वाज–सनेयि यजुर्वेद भी कहते हैं। शुक्ल यजुर्वेद को शुक्ल कहने का अभिप्राय यह है कि इसमें विशुद्ध मन्त्रात्मक भाग है। इसमें व्याख्यात्मक, विवरणात्मक या विनियोगात्मक भाग नहीं है। ये मन्त्र विविध यज्ञों में पढ़े जाते थे। विशुद्धि और परिष्कार के कारण ही इसे शुक्ल यजुर्वेद कहते हैं।

2. कृष्ण यजुर्वेद में मन्त्रों के साथ ही व्याख्या और विनियोग का अंश मिश्रित है, अतः इसे कृष्ण यजुर्वेद कहते हैं।

प्रतिपाद्य–विषय–

यजुर्वेद कर्मकाण्ड का वेद है। यज्ञ करने वाले तथा यजुर्वेद के मन्त्रों का उच्चारण करने वाले पुरोहित को अध्वर्यु कहते थे। अतएव ऋग्वेद में कहा गया है–**यज्ञस्य मात्रां वि मिमीत उ त्वः**, वह यज्ञ को सम्पन्न करता है। इसीलिए अध्वर्यु की व्याख्या की है–**अध्वरं युनक्ति, अध्वरस्य नेता**, अर्थात् अध्वर्यु यज्ञ का संयोजक एवं सम्पादक होता है। शुक्ल यजुर्वेद वाजसनेयि संहिता के विषय ही प्रायः सभी यजुर्वेदीय संहिताओं के प्रतिपाद्य विषय हैं– वाजसनेयि संहिता के प्रतिपाद्य–विषय अध्याय–क्रम से इस प्रकार हैं– (अध्याय 1–2) दर्शपौर्णमास इष्टियाँ, (**अ0** 3) अग्निहोत्र और चातुर्मास्य इष्टियाँ, (**अ0** 4–8) सोमयाग तथा उससे संबद्ध अग्निष्टोम और तीनों सवन, (**अ0** 9–10) वाजपेय और राजसूय यज्ञ, (**अ0** 11–18) अग्निचयन, वेदी–निर्माण, (16 वाँ अध्याय रुद्राध्याय कहा जाता है, इसमें रुद्र के स्वरूप का विस्तृत वर्णन है), (**अ0** 19–21) सौत्रामणी यज्ञ, (**अ0** 22–25) अश्वमेध यज्ञ, (**अ0** 26–29) खिल मन्त्रों में पूर्वोक्त अनुष्ठानों से संबद्ध

नवीन मन्त्र, (**अ0** 30) पुरुषमेध, (**अ0** 31) पुरुष–सूक्त में विराट–पुरुष का स्वरूप–वर्णन, (**अ0** 32–33) सर्वमेध, (**अ0** 34) शिव–संकल्प सूक्त, (**अ0** 35) पितृमेध, (**अ0** 36–38) प्रवर्ग्ययाग, (**अ0** 39) नरमेध या अन्त्येष्टि, (**अ0** 40) ईशोपनिषद्। उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि विविध यज्ञ काम्य अनुष्ठान थे, जो किसी उद्देश्य–विशेष की पूर्ति के लिए आयोजित होते थे।

सामवेद–

सामन् का अर्थ–सामन् का वास्तविक अर्थ गान है। ऋग्वेद के मन्त्र जब विशिष्ट गान–पद्धति से गाए जाते हैं, तो उनको सामन् (साम) कहते हैं। अतएव पूर्वमीमांसा में गीति या गान को साम कहा गया है–गीतिषु सामाख्या (पूर्व0 2–1–36)। ऋग्वेद और सामवेद अर्थात् ऋचा+गान ॽ सामन् हैं। इसको ही अनेक रूप में सामान्य या आलंकारिक रूप में प्रकट करने का प्रयत्न किया गया है।

मन्त्र संख्या–

सामवेद की पूरी मंत्र संख्या 1875 है। इसमें ऋग्वेद के मन्त्रों की संख्या 1771 है। इस प्रकार केवल 104 मन्त्र सामवेद में नए हैं। ऋग्वेद के 1771 मंत्रों में 267 पुनरुक्त हैं। सामवेद के 104 नए मंत्रों में 5 पुनरुक्त हैं। इस प्रकार ऋग्वेद में सर्वथा अप्राप्त 99 मंत्र हैं।

प्रतिपाद्य विषय–

सामवेद में उपासना प्रमुख है। इसमें मुख्यतः सोमयाग से संबद्ध मन्त्रों का संकलन है। पूर्वार्चिक में अग्नि, इन्द्र और पवमान सोम से संबद्ध मन्त्र दिये गये हैं। इन मन्त्रों में सामगान की दृष्टि से प्रत्येक मन्त्र की लय स्मरण करनी होती है, जिनका प्रयोग उत्तरार्चिक में होता है। उत्तरार्चिक के द्विक, त्रिक या चतुष्क आदि (2, 3 या 4 मंत्रों का समूह) में इन लयों का प्रयोग करना होता है। अधिकांश त्रिक आदि का प्रथम मन्त्र पूर्वार्चिक का होता है, जिसकी लय पर वह पूरा सूक्त (त्रिक आदि) गाया जाता है। यज्ञों के समय उद्गाता इन मन्त्रों को गाता है, अतः यजुर्वेद और सामवेद का घनिष्ठ सम्बन्ध है। सामवेद में सोम, सोमरस, सोमपान, सोमयाग का विशेष महत्त्व है, अतः इसे सोम–प्रधान वेद कह सकते हैं। आध्यात्मिक दृष्टि से सोम ब्रह्म या शिव–तत्त्व है। उसकी प्राप्ति का साधन उपासना है। सामवेद संगीत एवं भक्ति के द्वारा उसकी प्राप्ति का साधन है।

अथर्ववेद–

अथर्वन् का अर्थ–

निरुक्त और गोपथ ब्राह्मण में अथर्वन् शब्द के दो निर्वचन दिये हैं–

1. अथर्वन्–गतिहीन या स्थिरता से युक्त योग।
2. निरुक्त के अनुसार थर्व् धातु गत्यर्थक है,

अतः अथर्वन्–गतिहीन या स्थिर। इसका अभिप्राय है–जिसमें चित्तवृत्तियों के निरोधरूपी योग का उपदेश है।

प्रतिपाद्य विषय–

ब्लूमफील्ड और विन्टरनित्स ने अथर्ववेद का पूरा नाम अथर्वांगिरस वेद माना है और इसकी व्याख्या इस प्रकार की है– अवेस्ता का अथर्वन् शब्द अथर्वन् का प्रतिनिधि है, जिसका अर्थ पुरोहित है। यह अग्नि की पूजा करता था। अथर्ववेद भी अग्नि–पूजा या यज्ञ में विश्वास रखता है। अवेस्ता का अथर्वन् पौरोहित्य के साथ जादू का भी काम करता था। आंगिरस भी प्रागैतिहासिक काल के पुरोहित है। दोनों यज्ञ के साथ ही जादू में भी निपुण थे। अथर्वन् और आंगिरसों में भेद यह है कि अथर्वन् के मन्त्रों में सुख–शान्ति और अच्छाई वाले जादू हैं। इनमें रोग–निवारण आदि के लिए भी मंत्र हैं। आंगिरस मंत्रों में कृत्या–प्रयोग, अभिचार–कर्म, शत्रु–नाशन आदि के मंत्र हैं।

अथर्ववेद में काण्डों के अनुसार प्रतिपाद्य–विषय संक्षेप में इस प्रकार हैं– विविध रोगों की निवृत्ति, पाश–मोचन, रक्षोनाशन, शर्म–प्राप्ति आदि। रोग, शत्रु एवं कृमि–नाशन, दीर्घायुष्य, शत्रु–सेना–संमोहन, राजा का निर्वाचन, शाला–निर्माण, कृषि एवं पशुपालन, ब्रह्मविद्या, विषनाशन, राज्याभिषेक, वृष्टि, पापमोचन, ब्रह्मौदन का वर्णन, ब्रह्मविद्या, कृत्या–परिहार, दुःस्वप्न–नाशन, अन्न–समृद्धि, आत्मा का वर्णन, प्रतिसर मणि, विराट् ब्रह्म का वर्णन, मधुविद्या, पंचौदन अज, अतिथि–सत्कार, गाय का महत्त्व, यक्ष्म–नाशन, कृत्या–निवारण, ब्रह्मविद्या एवं वरण मणि का वर्णन, सर्प–विष–नाशन एवं ज्येष्ठ ब्रह्म का महत्त्व, ब्रह्मोदन, रुद्र, ब्रह्मचर्य का वर्णन, पृथ्वीसूक्त, भूमि का महत्त्व, अध्यात्म–वर्णन, विवाह–संस्कार, व्रात्य–ब्रह्म का वर्णन, दुःख–मोचन, अभ्युदय के लिए प्रार्थना, संमोहन, पितृमेध, यज्ञ, नक्षत्र, विविध मणियाँ, छन्दों के नाम, राष्ट्र का वर्णन, काल का महत्त्व, सोमयाग–वर्णन, इन्द्र–स्तुति। कुन्ताप–सूक्त में राजा परीक्षित् के राज्य शासन का वर्णन है।

5.4 प्रमुख ब्राह्मण ग्रन्थ–

ब्राह्मण का अर्थ–

इन ग्रन्थों को ब्राह्मण कहने के तीन कारण माने जाते हैं, तदनुसार इसके तीन अर्थ हैं–

1. ब्रह्मन् का अर्थ मंत्र है, अतः मन्त्रों की व्याख्या एवं विनियोग प्रस्तुत करने के कारण इन्हें ब्राह्मण कहते हैं।
2. ब्रह्मन् का अर्थ यज्ञ भी है, अतः यज्ञों की व्याख्या और विवरण प्रस्तुत करने वाले ग्रन्थों को ब्राह्मण कहते हैं।
3. ब्रह्मन् का अर्थ रहस्य भी है, अतः वैदिक रहस्यों का उद्घाटन करने के कारण इन्हें ब्राह्मण कहते हैं। इनमें यज्ञों का आध्यात्मिक, आधिदैविक और वैज्ञानिक महत्त्व प्रस्तुत किया गया है। भट्ट भास्कर ने कर्मकांड तथा मंत्रों के व्याख्यान–ग्रन्थों को ब्राह्मण कहा है।

ब्राह्मणं नाम कर्मणस्तन्मन्त्राणां व्याख्यानग्रन्थः।

(भट्टभास्कर–तैति0सं0 1–5–1 पर)

वाचस्पति मिश्र ने ब्राह्मण ग्रन्थों का प्रयोजन निर्वचन, मंत्रों का विनियोग, अर्थवाद (प्रतिष्ठान) और विधि माना है।

नैरुक्त्यं यस्य मन्त्रस्य विनियोगः प्रयोजनम्।

प्रतिष्ठानं विधिश्चैव ब्राह्मणं तदिहोच्यते।।

प्रतिपाद्य विषय–

ब्राह्मणों में प्रतिपाद्य विषय को तीन भागों में बाँटा जा सकता है–

1. **विधि**–जिसमें यज्ञ तथा उससे सम्बद्ध कार्य–कलाप के लिए नियम दिये गये हैं।
2. **अर्थवाद**– जिसमें यज्ञों का महत्त्व तथा उससे संबद्ध उपाख्यान दिये गये हैं।
3. **उपनिषद्**– जिसमें आध्यात्मिक एवं दार्शनिक विचारों का समावेश है। ब्राह्मणों में यज्ञ के लिए चार पुरोहितों की आवश्यकता बताई है। इन चारों का एक–एक वेद से सम्बन्ध है।

1. होता– यह यज्ञ में ऋग्वेद के मन्त्रों का पाठ करता है।

2. अध्वर्यु– यह यज्ञ करता है और यजुर्वेद के मन्त्रों का पाठ करता है।

3. उद्गाता– यह सामवेद के मन्त्रों का गान करता है।

4. ब्रह्मा– यह चारों वेदों का ज्ञाता होता है। चारों पुरोहितों में इसका स्थान सर्वोच्च होता है। इसके निरीक्षण एवं निर्देशन में यज्ञ होता है।

मन्त्र और ब्राह्मण–

संहिताओं और ब्राह्मण ग्रन्थों का स्वतन्त्र अस्तित्व है। मन्त्रभाग का कर्मकांड में विनियोग होता है, ब्राह्मण भाग मन्त्रों के विनियोग की विधि बताता है। एक मूल है और दूसरा उसका व्याख्यान या भाष्य। यज्ञों में मन्त्रों से ही आहुति दी जाती है, ब्राह्मण भाग उसकी उपयोगिता बताता है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। वेद शब्द मूलतः वैदिक संहिताओं का ही वाचक है, ब्राह्मण ग्रन्थों का नहीं। वैदिक साहित्य में ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषदों का भी समावेश है। वेद शब्द का गौण अर्थ वैदिक–साहित्य लेने पर ब्राह्मणों को भी वेद कहा जा सकता है। अतएव गौण अर्थ को लेते हुए **मन्त्र–ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्',** मन्त्र और ब्राह्मणों को वेद कहते हैं, यह उक्ति प्रचलित है। यही भाव आपस्तम्ब श्रौतसूत्र (24–1–31), बौधायन गृह्यसूत्र (2–6–3), कौशिक सूत्र (1–3), तन्त्रवार्तिक (1–3–10), शांकरभाष्य (वेदान्त–दर्शन 1–3–33) आदि में भी प्रकट किया गया है। मन्त्रों और ब्राह्मणों में वस्तुतः मौलिक भेद है। यथा–भाव–भेद, विषय–भेद और प्रक्रिया–भेद। अतः वास्तविक रूप में दोनों को वेद कहना असंगत एवं अनुपयुक्त है।

ब्राह्मणों की भाषा एवं शैली–

ब्राह्मण ग्रन्थों की भाषा सरल, सरस और प्रसाद गुण—युक्त है। वर्ण्य विषय की दुरूहता को देखते हुए इन ग्रन्थों में प्रयत्न किया गया है कि लम्बे समासों, क्लिष्ट पदों और अस्पष्टार्थक शब्दों का प्रयोग न किया जाए। शैली प्रवाहयुक्त और रोचक है। आख्यानों के प्रसंग में शैली की रोचकता विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ब्राह्मणों की भाषा वैदिक और लौकिक संस्कृत को जोड़ने वाली सुन्दर कड़ी है। यज्ञिय, दार्शनिक एवं गूढ़ प्रसंगों को भी सरल भाषा में प्रस्तुत किया गया है। ब्राह्मणों में वैदिक और लौकिक शब्दावली का समन्वय है। शब्द—रूपों का वैविध्य ऋग्वेद की अपेक्षा बहुत कम है। लोट् लकार का प्रयोग मिलता है, परन्तु अल्प मात्रा में। तुमर्थक प्रत्ययों के प्राचीन रूप यत्र—तत्र दृष्टिगोचर होते हैं। वैदिक छन्दों से नियन्त्रित न होने के कारण ब्राह्मणो में भाव—प्रकाशन की पूर्ण स्वतन्त्रता है। कहीं—कहीं गाथा छन्दों से मिलते हुए पद्य भी हैं। ऐसे पद्य मुख्यतया आख्यानों में हैं।

वेदानुसार ब्राह्मणों का वर्गीकरण—

ऋग्वेदीय—1. ऐतरेय ब्राह्मण, 2. शांखायन (कौषीतकि) ब्राह्मण, शुक्ल **यजुर्वेदीय—**3. शतपथ—ब्राह्मण, **कृष्ण यजुर्वेदीय—**4. तैत्तिरीय ब्राह्मण, **सामवेदीय—**5. पंचविश (तांड्य या प्रौढ़) ब्राह्मण, 6. षड्विंश, 7. सामविधान, 8. आर्षेय, 9. दैवत, 10. छान्दोग्य (उपनिषद्) ब्राह्मण, 11. संहितोपनिषद्, 12. वंश—ब्राह्मण, 13. जैमिनीय (तलवकार) ब्राह्मण, **अथर्ववेदीय—**14. गोपथ—ब्राह्मण।

श्री डॉ0 बटकृष्ण घोष ने 16 अनुपलब्ध ब्राह्मणों के उपलब्ध उद्धरण एकत्र किये हैं। उनके नाम हैं— शाकटायन, भाल्लवि, जैमिनीय (या तवलकार), आह्वरक, कंकति, कालबब्रि, चरक, छागलेय, जाबालि, पैंगायनि, माषशरावि, मैत्रायणीय, रीरुकि, शैलालि, श्वेताश्वतर और हारिद्रविक। श्री पं0 भगवद्दत्त ने इनके अतिरिक्त आठ अन्य ब्राह्मणों के नाम दिये हैं। इनके नाम हैं—काठक, खाण्डिकेय, औरवेय, गालव, तुम्बरु, आरुणेय, सौलभ और पराशर।

ब्राह्मण ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय—

ऐतरेय ब्राह्मण—

इनमें 40 अध्याय हैं, जो पाँच—पाँच अध्यायों की 8 पंचिकाओं में विभक्त हैं। इसमें मुख्य रूप से सोमयाग का वर्णन है। इसमें सोमयाग से संबद्ध अग्निष्टोम, गवामयन, द्वादशाह, अग्निहोत्रादि का वर्णन है। बाद में राज्याभिषेक और कुलपुरोहित के अधिकार का वर्णन है। अन्तिम 10 अध्यायों में उपाख्यान और इतिहास है। इसकी सप्तम पंचिका के 3 अध्यायों (31 से 33 अध्याय) में प्रसिद्ध शुनःशेप का आख्यान है, जो 'चरैवति, चरैवेति' गाथाओं के कारण विशेष विख्यात है। यह ऋग्वेद का सबसे प्रसिद्ध ब्राह्मण है। इसके रचयिता महिदास ऐतरेय माने जाते हैं।

शांखायन ब्राह्मण–

इसको कौषीतकि ब्राह्मण भी कहते हैं। इसमें 30 अध्याय हैं। इसमें अग्न्याधान, अग्निहोत्र, दर्श–पौर्णमास और चातुर्मास्य इष्टियों का वर्णन है। इसमें भी सोमयाग प्रधान विषय है।

शतपथ ब्राह्मण–

शुक्ल यजुर्वेद का यह एकमात्र ब्राह्मण है। इसके दो पाठ प्राप्त होते हैं– 1. माध्यन्दिन–शाखीय। इसमें 14 कांड और 100 अध्याय हैं। 100 अध्यायों के कारण ही इसका नाम शतपथ पड़ा। 2 कण्डशाखीय। इसमें 17 कांड और 104 अध्याय हैं। शतपथ–ब्राह्मण के रचयिता याज्ञवल्क्य ऋषि माने जाते हैं। इसके प्रारम्भिक 9 कांडों में शुक्ल यजुर्वेद के 18 अध्यायों की व्याख्या है। इसमें दर्श–पौर्णमास, अग्निहोत्र, चातुर्मास्य, वाजपेय, राजसूय, अग्निरहस्य, अश्वमेध, पुरुषमेध और सर्वमेध आदि का विस्तृत वर्णन है। इसमें पुरुरवा–उर्वशी, दुष्यन्तपुत्र भरत, मत्स्य, जल–प्लावन तथा मनु की कथाएँ हैं। इसमें सर्वप्रथम सांख्य के आचार्य आसुरि तथा पाण्डव राजा जनमेजय का उल्लेख है। बौद्ध साहित्य में प्राप्त पारिभाषिक शब्द अर्हत्, श्रमण और प्रतिबुद्ध का सर्वप्रथम प्रयोग इसी ग्रन्थ में है। इसकी शैली सरस, सरल, प्रसाद गुण–युक्त और प्रभावशाली है।

तैत्तिरीय ब्राह्मण–

यह कृष्ण–यजुर्वेदीय शाखा का एकमात्र ब्राह्मण है। इसमें 3 कांड है। इसमें कांड 1 में अग्न्याधान, वाजपेय, सोम, राजसूय आदि, कांड 2 में सौत्रामणि, बृहस्पतिसव और वैश्यसव आदि तथा कांड 3 में नक्षत्रेष्टि का मुख्य रूप से वर्णन है। कृष्ण यजुर्वेद की अन्य शाखाओं के ब्राह्मण अप्राप्त हैं।

सामवेदीय ब्राह्मण–

सामवेद के 11 ब्राह्मण ग्रन्थ प्राप्त होते हैं। इनमें ताण्ड्य शाखा का **पंचविंश ब्राह्मण** मुख्य है। इसको ही प्रौढ़, ताण्ड्य और महाब्राह्मण भी कहते हैं। इसमें 25 अध्याय हैं। इसका मुख्य विषय सोमयाग है। **षड्विंश ब्राह्मण** में 5 प्रपाठक हैं। यह वस्तुतः पंचविंश ब्राह्मण का ही परिशिष्ट है। इसके अन्तिम प्रपाठक को **अद्भुत ब्राह्मण** कहते हैं। इसमें उत्पातों की शान्ति का विधान है। छान्दोग्य ब्राह्मण को मंत्र ब्राह्मण भी कहते हैं। इसमें दो ग्रन्थ सम्मिलित हैं–

1.छान्दोग्य ब्राह्मण– इसमें 2 प्रपाठक हैं। प्रत्येक में 8 खंड हैं।

2. छान्दोग्य उपनिषद्–इसमें आठ प्रपाठक हैं। यह प्रसिद्ध छान्दोग्य उपनिषद् है। सामविधान ब्राह्मण में 3 प्रकरण हैं। जिनमें कृच्छ् अतिकृच्छ् आदि व्रतों, पुत्र, ऐश्वर्य एवं आयुष्य की प्राप्ति के लिए विविध अनुष्ठानों का वर्णन है। **आर्षेय ब्राह्मण** में 3 प्रपाठक हैं। यह सामवेद की आर्षानुक्रमणी का काम करता है। **दैवत ब्राह्मण या देवताध्याय ब्राह्मण** में 3 खंड हैं। इसमें देवताओं और छन्दों का वर्णन है। इसमें दिये गये छन्दों

के निर्वचन विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। संहितोपनिषद् ब्राह्मण में सामगान की पद्धति का विवेचन है। वंश ब्राह्मण में सामवेद के गुरुओं की वंश–परम्परा वर्णित है। **जैमिनीय या तलवकार ब्राह्मण** में यागानुष्ठानों का महत्त्व वर्णित है। इसका ही एक भाग जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण नाम से प्रसिद्ध है, जो **गायत्र्युपनिषद्** भी कहा जाता है।

गोपथ ब्राह्मण–

यह अथर्ववेद का एकमात्र ब्राह्मण है। इसके दो भाग हैं– 1. पूर्व भाग या पूर्व गोपथ, 2. उत्तर भाग या उत्तर गोपथ। प्रथम में 5 प्रपाठक या अध्याय हैं, द्वितीय में 6। पूर्व भाग में ये विषय वर्णित हैं– ओंकार और गायत्री का महत्त्व, ब्रह्मचारी के कर्त्तव्य, ऋत्विजों के कार्य एवं उनकी दीक्षा, संवत्सर सत्र, पुरुषमेध, अश्वमेध, अग्निष्टोम आदि प्रसिद्ध याग। उत्तर भाग में विविध यज्ञों और उनसे संबद्ध आख्यायिकाओं का वर्णन है। इसके रचयिता गोपथ ऋषि माने जाते हैं।

5.5 षड्वेदांग–

वेदांग का अर्थ–

वेदस्य अंगानि, वेद के अंग। अंग का अर्थ है– अङ्ग्यन्ते ज्ञायन्ते एभिरिति अंगानि, अर्थात् वे उपकारक तत्त्व जिनसे वस्तु के स्वरूप का बोध होता है। वेदों के वास्तविक अर्थ के ज्ञान के लिए जिन साधनों की उपयोगिता थी, उन्हें वेदांग कहते थे। वेदांगों के द्वारा मंत्रों का अर्थ, उनकी व्याख्या एवं यज्ञादि में उनके विनियोग का बोध होता था।

संख्या–

वेदांग 6 माने जाते हैं। 1. शिक्षा, 2. व्याकरण, 3. छन्द, 4. निरुक्त, 5. ज्योतिष, 6. कल्प।

शिक्षा व्याकरणं छन्दो निरुक्तं ज्योतिषं तथा।
कल्पश्चेति षड्ंगानि वेदस्याहुर्मनीषिणः।।

ये वेदांग सामान्यतया सूत्र–शैली में लिखे गये हैं। वैदिक कर्मकाण्ड, विनियोग एवं यज्ञ–विधि आदि के नियम बहुत विस्तृत और व्यापक थे, अतः संक्षेप में स्मरणार्थ सूत्र–शैली को अपनाया गया है। पाणिनीय शिक्षा में वेद–पुरुष के 6 अंगों के रूप में 6 वेदांगों का वर्णन है– छन्द वेदपुरुष के पैर हैं, कल्प हाथ हैं, ज्योतिष नेत्र हैं, निरुक्त कान हैं, शिक्षा नासिका है और व्याकरण मुख है।

छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते।
ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते।।
शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य, मुखं व्याकरणं स्मृतम्।
तस्मात् सांगमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते।।

शिक्षा–

शिक्षा का अर्थ है– वर्णोच्चारण की शिक्षा देना। सायण ने ऋग्वेदभाष्य–भूमिका में शिक्षा का अर्थ दिया है– जिसमें स्वर, वर्ण आदि के उच्चारण की शिक्षा दी जाती है, उसे शिक्षा कहते हैं।

स्वरवर्णाद्युच्चारणप्रकारो यत्र शिक्ष्यते उपदिश्यते सा शिक्षा।

अतएव शिक्षा का उद्देश्य है– वर्णोच्चारण की शिक्षा देना, किस वर्ण का किस स्थान से उच्चारण किया जाता है, उसमें क्या प्रयत्न करना पड़ता है, वर्ण कितने हैं, उनका किस रूप में विभाजन होता है, कितने स्थान और प्रयत्न हैं, शरीर–वायु किस प्रकार वर्ण–रूप में परिवर्तित होती है, कितने स्वर हैं, किस स्वर का किस प्रकार उच्चारण किया जाता है, इत्यादि।

व्याकरण–

मुखं व्याकरणं स्मृतम्' व्याकरण को वेदपुरुष का मुख माना जाता है। मुख अभिव्यक्ति और विश्लेषण का साधन है, तद्वत् व्याकरण भी पद–पदार्थ, एवं वाक्य–वाक्यार्थ की अभिव्यक्ति तथा प्रकृति–प्रत्यय के विश्लेषण का साधन है। अतएव व्याकरण का अर्थ हैं–**व्याक्रियन्ते विविच्यन्ते शब्दा अनेनेति व्याकरणम्,** जिसके द्वारा प्रकृति–प्रत्यय का विवेचन किया जाता है।

छन्द–

वैदिक मन्त्रों के उच्चारण के लिए छन्दस् (छन्द) का ठीक ज्ञान अनिवार्य है। इसके लिए छन्दो–विषयक ग्रन्थों की रचना हुई। इस विषय का अत्यल्प साहित्य उपलब्ध है। यास्क ने निरुक्त (7–19) में छन्दस् का निर्वचन छद् (ढकना) धातु से दिया है– छान्दांसि छादनात् अर्थात् छन्द भावों को आच्छादित करके समष्टिरूप प्रदान करते हैं। कात्यायन ने सर्वानुक्रमणी में छन्द का लक्षण दिया है– यदक्षरपरिमाणं तच्छन्दः, अर्थात् संख्या–विशेष में वर्णों की सत्ता छन्द है। प्रत्येक छन्द में वर्णों की संख्या निर्धारित रहती है। वैदिक छन्द' उपशीर्षक में इसका वर्णन किया जा चुका है।

प्राचीन छन्दो–विषयक सामग्री निम्नलिखित ग्रन्थों में प्राप्त होती है– (1) शांखायन श्रौत–सूत्र (केवल 7–27 में), (2) ऋग्वेद–प्रातिशाख्य (पटल 16 से 18 में), (3) सामवेद का निदान सूत्र, (4) पिंगल–प्रणीत छन्द–सूत्र, (5.) कात्यायन–कृत दो छन्दोऽनुक्रमणियाँ।

वैदिक छन्द वृत्तात्मक (वर्णवृत्त) हैं। इनमें प्रत्येक पाद में वर्णों की संख्या निर्धारित होती है। ऋक्–प्रातिशाख्य के तीन पटलों में ऋग्वेद में प्रयुक्त छन्दों का विस्तृत वर्णन है। निदान–सूत्र में वैदिक छन्दों के नाम और लक्षण दिये हैं। इसमें छन्दों के अतिरिक्त सामवेद के अंग–उक्थ, स्तोम, गान–का भी विवेचन है। कुछ प्राचीन लेखक इसे पतंजलि की रचना मानते हैं। इसमें 10 अध्याय हैं। अन्त में प्रयुक्त छन्दों की अनुक्रमणी दी गयी है। पिंगल के छन्दःसूत्र के पूर्व भाग में वैदिक छन्दों का विवेचन है। उत्तर भाग में लौकिक छन्दों का विश्लेषण है। यद्यपि यह स्वयं को वेदांग कहता है, परन्तु रचना की दृष्टि से

परवर्ती ज्ञात होता है, क्योंकि इसमें लौकिक छन्दों का विशेष विवेचन है। यह वैदिक छन्दों की अपेक्षा लौकिक छन्दों का अधिक प्रामाणिक ग्रन्थ है। कात्यायन–कृत छन्दोऽनुक्रमणी में ऋग्वेद में प्रयुक्त छन्दों की नामावलि है तथा उसी की सर्वानुक्रमणी के प्रारम्भ में 9 अध्यायों में वैदिक छन्दों पर संक्षिप्त निबन्ध हैं।

निरुक्त–

इसमें वैदिक शब्दों के निर्वचन की पद्धति दी गयी है। संप्रति यास्क (800 ई0पू0 के लगभग) कृत निरुक्त ही इस विषय का प्रामाणिक ग्रन्थ उपलब्ध है। यह निघण्टु' नामक वैदिक–शब्द–कोष पर आश्रित है तथा उसी का व्याख्या ग्रन्थ है। इसमें वैदिक मन्त्रों की निर्वचनात्मक व्याख्या का सर्वप्रथम स्तुत्य प्रयास है। इस वेदार्थ–पद्धति को नैरुक्त –पद्धति कहा जाता है। यास्क ने वैदिक देवतावाचक शब्द अग्नि, इन्द्र, वरुण, सविता आदि को निर्वचनात्मक मानकर इनसे संबद्ध मन्त्रों के चार–चार प्रकार के अर्थ प्रस्तुत किए हैं– आध्यत्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक और अधियज्ञ। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने यास्क की प्रक्रिया को प्रामाणिक माना है और तदनुसार ऋग्वेद और यजुर्वेद का भाष्य किया है।

याष्क ने अपने पूर्ववर्ती निरुक्तकारों (औदुम्बरायण, गार्ग्य, शाकपूणि आदि) का निरुक्त में उल्लेख किया है। निरुक्त के प्राचीन टीकाकारों में विशेष उल्लेखनीय हैं– दुर्गाचार्य, स्कन्दस्वामिन्, महेश्वर। निरुक्त का आलोचनात्मक संस्करण प्रकाशित करने का श्रेय डॉ0 लक्ष्मणस्वरूप को है। इन्होंने इसका अंग्रेजी अनुवाद भी प्रकाशित किया है। निघण्टु में 5 अध्याय हैं। (1) प्रथम तीन अध्यायों में पर्यायवाची शब्द हैं, जैसे– पृथ्वी–वाचक–21 शब्द, मेघवाचक–30शब्द, वाणीवाचक–57 शब्द, जलवाचक–100 शब्द। निरुक्त के प्रथम तीन अध्यायों में इन पर्याय–शब्दों की व्याख्या है, अतः इन तीन अध्यायों को नैघण्टुक काण्ड कहते हैं। (2) निघण्टु के चतुर्थ अध्याय में कठिन और अस्पष्ट वैदिक शब्द दिये हैं। इन शब्दों की व्याख्या एवं स्पष्टीकरण निरुक्त के 4 से 6 अध्यायों में है। इसे नैगमकाण्ड या ऐकपदिक कहते हैं। (3) निघण्टु के पंचम अध्याय में देवतावाचक शब्द हैं। इनकी व्याख्या निरुक्त 7 से 12 अध्याय में है। इसे दैवतकाण्ड कहते हैं। इसमें पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक के देवों के विषय में विवेचन है। इसका 1 परिशिष्ट भी 13 वें अध्याय के नाम से उपलब्ध है। इसमें अक्षर, सोम, जातवेदम् आदि का वर्णन है।

निरुक्त के प्रतिपाद्य विषय 5 हैं– वर्णागम, वर्ण–विपर्यय, वर्ण–विकार, वर्ण–नाश और धातुओं का अनेक अर्थों में प्रयोग।

वर्णागमो वर्णविपर्ययश्च, द्वौ चापरौ वर्णविकारनाशौ।

धातोस्तदर्थातिशयेन योगस्तदुच्यते पंचविषं निरुक्तम्।।

शब्द–व्युत्पत्ति, शब्द–निर्वचन–शास्त्र, भाषा–विज्ञान और अर्थ–विज्ञान का यह सबसे प्राचीन प्रामाणिक ग्रन्थ है।

ज्योतिष–

वैदिक यज्ञों के शुभ मुहूर्त–निर्धारण के लिए ज्योतिष नामक वेदांग की आवश्यकता हुई। वेदांग–ज्योतिष में इसका महत्व बताया गया है कि यह शास्त्र यज्ञों का काल–विधान बताता है।

वेदा हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ताः कालानि पूर्वा विहिताश्च यज्ञाः।

तस्मादिदं कालविधानशास्त्रं, यो ज्योतिषं वेद स वेद यज्ञम्।।

वेदांग–ज्योतिष नामक एक ज्योतिष का प्राचीन ग्रन्थ प्राप्त होता है। इसका दो वेदों से सम्बन्ध है– 1. यजुर्वेद से, याजुष ज्योतिष, इसमें 43 श्लोक हैं। 2. ऋग्वेद से, आर्च ज्योतिष, इसमें 36 श्लोक हैं। इसका कर्ता आचार्य लगध को माना जाता है। (कालज्ञानं प्रवक्ष्यामि लगधस्य महात्मनः आर्च ज्योतिष, श्लोक 2)। डॉ0 थीबो, शंकर बालकृष्ण दीक्षित, लोकमान्य तिलक तथा सुधाकर द्विवेदी आदि विद्वानों ने इसके श्लोकों की यथा–समय व्याख्या की है। ज्योतिष के सिद्धान्त–ग्रन्थों में गणना 12 राशियों से की जाती है, किन्तु इस ज्योतिष में राशियों का कहीं नाम–निर्देश नहीं हैं, अपितु 27 नक्षत्र ही गणना के आधार हैं। शंकर बालकृष्ण दीक्षित ने वेदांग–ज्योतिष का समय 1,400ई0पू0 माना है।

वैदिक–ज्योतिष में सूर्य, चन्द्र, ग्रह तथा नक्षत्रों की गति का निरीक्षण, परीक्षण एवं विवेचन होता था। सौर और चन्द्र मासों की गणना होती थी। यज्ञीय कार्यों के लिए चान्द्रमास ही मुख्य माना जाता था।

कल्प–

वेदांगों में कल्पसूत्रों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। कल्प का अर्थ है–यज्ञीय विधियों का समर्थन और प्रतिपादन। कल्प्यते समर्थ्यते यागप्रयोगोऽत्र, इति व्युत्पत्तेः'। कल्प की दूसरी व्याख्या है– जिसमें वैदिक कर्मों का व्यवस्थित रूप से वर्णन या प्रतिपादन होता है। कल्पो वेदविहितानां कर्मणामानुपूर्व्येण कल्पनाशास्त्रम्'।

5.6 सूत्र साहित्य–

श्रौतसूत्र–

श्रौतसूत्रों में महत्त्वपूर्ण वैदिक यज्ञों का क्रमबद्ध वर्णन है। इन यज्ञों में प्रमुख ये हैं– दर्श, पौर्णमास, सोमयाग, वाजपेय, राजसूय, सौत्रामणी, अश्वमेध आदि। इनके अतिरिक्त दक्षिण, आहवनीय और गार्हपत्य अग्नियों की इष्टियों का वर्णन है। प्रमुख श्रौत सूत्र ये हैं– 1. ऋग्वेदीय–आश्वलायन और शांखायन। 2. शुक्ल यजुर्वेदीय–कात्यायन श्रौतसूत्र। 3. कृष्ण यजुर्वेदीय–बौधायन, आपस्तम्ब, हिरण्यकेशी या सत्याषाढ, वैखानस, भारद्वाज, मानव और वाराह श्रौतसूत्र। 4. सामवेदीय– आर्षेय या मशक, लाट्यायन, द्राह्यायण और जैमिनीय श्रौतसूत्र। 5. अथर्ववेदीय– वैतान–श्रौतसूत्र।

गृह्यसूत्र–

गृह्यसूत्रों में 16 संस्कारों, 5 महायज्ञों, 7 पाक–यज्ञों, गृह–निर्माण, गृह प्रवेश, पशुपालन, रोगनाशक विधियों आदि का वर्णन है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि गृहस्थ जीवन से संबद्ध सभी संस्कारों और विधियों, का इनमें वर्णन है। प्रमुख गृह्यसूत्र ये हैं– 1. ऋग्वेदीय–आश्वलायन, शांखायन

2. शुक्लयजुर्वेदीय– पारस्कर गृह्यसूत्र,

3. कृष्णयजुर्वेदीय, कौषीतक गृह्यसूत्र–बौधायन, आपस्तम्ब, हिरण्यकेशी, वैखानस, भारद्वाज, मानव और बराह गृह्यसूत्र।

4. सामवेदीय–द्राह्यायण, गोभिल, खादिर और जैमिनीय गृह्यसूत्र।

5. अथर्ववेदीय– कौशिक गृह्यसूत्र।

धर्मसूत्र–

धर्मसूत्रों में नीति, धर्म, रीति, प्रथाओं, चारों वर्णों और आश्रमों के कर्तव्यों और सामाजिक नियमों का वर्णन है। प्रमुख धर्मसूत्र ये हैं– 1. ऋग्वेदीय– वसिष्ठ और विष्णु धर्मसूत्र, 2. शुक्ल यजुर्वेदीय–हारीत और शंख धर्मसूत्र, 3. कृष्ण यजुर्वेदीय–बौधायन, आपस्तम्ब और हिरण्यकेशी धर्मसूत्र, 4. सामवेदीय–गौतम धर्मसूत्र।

शुल्बसूत्र–

शुल्ब–सूत्रों में यज्ञवेदी के निर्माण से संबद्ध नाप आदि का तथा वेदी के निर्माण आदि के नियमों का वर्णन है। ये श्रौतसूत्रों से संबद्ध विषय का वर्णन करते हैं। इनमें भारतीय ज्यामिति के विकास का उत्कृष्ट रूप मिलता है। प्रमुख शुल्ब–सूत्र ये हैं–

1.शुक्ल–यजुर्वेदीय–कात्यायन शुल्बसूत्र,

2.कृष्ण यजुर्वेदीय–बौधायन, आपस्तम्ब और मानव शुल्बसूत्र।

5.7 वेदों का रचनाकाल–

प्राचीन भारतीय आर्य सभ्यता और संस्कृति के परिचायक एकमात्र ग्रन्थ, वेदों का निर्माण–काल आज भी अन्धकार में है। वेदों को सर्व प्राचीन ग्रन्थ के रूप में स्वीकार करते हुए भी विद्वान् इनके निर्माण–काल को लेकर एकमत नहीं हैं। भारतीय परम्परा तो इनके काल निर्धारण की चिन्ता ही नहीं करती। इसके अनुसार वेद अपौरुषेय हैं। वैदिक ऋषियों ने वेद मंत्रों की रचना नहीं की, वे मंत्रों के द्रष्टा थे, इसीलिए कहा भी गया है– 'ऋषिःदर्शनात्' वेद मंत्र का दर्शन करने के कारण ही वे ऋषि (द्रष्टा) कहलाये। यही कारण था कि भारतीय परम्परा वेदों के निर्माण–काल के बारे में चुप है। अनादिकाल से चली आयी आदि–पुरुष की वाणी में प्रतिनिधि वेद–मन्त्रों के पठन–पाठन, उनकी विभिन्न प्रकार के सुरक्षा की ओर भारतीय विद्वत्परम्परा का ध्यान भले ही गया हो, वेदों की आलोचना के लिए उनकी श्रद्धायुक्त बुद्धि आगे

नहीं बढ़ती। भारतीय परम्परा इन्हें अनादि और अनन्त काल से अविच्छिन्न मानती है। ऐतिहासिक दृष्टि से खोज–बीन करने वाले पाश्चात्य विद्वानों ने भारतीय सभ्यता और संस्कृति के अद्‌भुत स्रोत इन वेद–ग्रन्थों के काल–निर्धारण का भगीरथ प्रयास किया। पाश्चात्य विद्वानों की प्रेरणा से कुछ भारतीय विद्वानों ने भी इस दिशा में प्रयास किया। परन्तु वेदों के निर्माण–काल को लेकर विभिन्न विद्वानों ने जो परिकल्पनाएँ की हैं उनमें सदियों ही नहीं, सहस्राब्दियों का कालान्तर है।

डॉ0 मैक्समूलर का मत–

वेदों के निर्माण काल के निर्धारण का प्रयास करने वाले सर्वप्रथम पाश्चात्य विद्वान् डॉ0 मैक्समूलर हैं। इन्होंने अपने 'प्राचीन संस्कृत साहित्य' नामक ग्रन्थ में सर्वप्रथम इस दिशा में प्रयास किया। संहिताओं में सर्वप्राचीन ऋग्वेद संहिता का निर्माण–काल उन्होंने 1200 विक्रम संवत् माना, इस समय के निर्धारण में उन्होंने अपनी कुछ नवीन मान्यताएँ प्रस्तुत कीं। उन्होंने वैदिक साहित्य के विस्तार की अन्तिम सीमा बुद्ध–धर्म का उदय (600 ई0पू0) माना। उनका तर्क है कि बुद्ध धर्म के उदय के साथ ही वैदिक साहित्य का विकास रुक गया। अतः समस्त वैदिक वांगमय को उन्होंने चार भागों में बाँटकर उनके विकास का समय भी निश्चित कर दिया। डॉ0 मैक्समूलर वेदों को छन्दः काल, मंत्र–काल, ब्राह्मण–काल तथा सूत्रकाल इन चार भागों में बाँटकर प्रत्येक युग की विचारधारा के उदय और ग्रन्थ निर्माण को 200 वर्षों का समय देते हैं। इस प्रकार सूत्र–ग्रन्थों का निर्माण–काल वे 600 ई0पू0 बताते हैं। ब्राह्मण ग्रंथों का निर्माण 800–600 ई0पू0 के बीच, 1000–800 ई0पू0 के बीच में मंत्रयुग की परिकल्पना करते हैं और बताते हैं कि चारों मंत्र संहिताओं का संकलन इसी युग में हुआ होगा। 1200–1000 ई0पू0 के बीच वे छन्दः काल मानते हैं जिसमें वैदिक ऋषियों ने विविध अर्थगौरव से पूर्ण वैदिक मंत्रों की रचनाएँ की होंगी। उनके अनुसार ऋग्वेद के मंत्रों का यही रचना–काल है। इस प्रकार बुद्ध धर्म से पीछे हटते–हटते उन्होंने ऋग्वेद के रचना–काल तक पहुँचने का प्रयास किया।

मैक्समूलर द्वारा स्थापित यह प्रथम मत अनेक भ्रामक धारणाओं से युक्त होते हुए भी बहुत सारे लोगों को मान्य हुआ। परन्तु इस मत में तथ्य कम, कल्पना अधिक है। इस मत की जड़ें तो तीस वर्ष बाद स्वयं मैक्समूलर की अपनी विरोधी मान्यताओं के कारण ही हिल गयीं। 1956 ई0 में उन्होंने इस मत का प्रतिपादन किया। सन 1986 ई0 में 'भौतिक धर्म' शीर्षक अपनी जिफोर्ड व्याख्यान–माला में उन्होंने स्वयं ही कहा कि इस पृथ्वी पर कोई ऐसी शक्ति नहीं जो यह निश्चय कर सके कि वेदों का निर्माण काल 1000 वि0पू0 था या 1500 वि0पू0 या 3000 वि0पू0 में हुआ।

इस प्रकार इनके द्वारा स्थापित मत स्वयं अपने आप में ही भ्रामक है। इस मत की स्थापना से इतना लाभ अवश्य हुआ कि वेदों के निर्माण व समापन की एक तिथि सीमा निश्चित हो गयी। इनके निर्माण–काल को 1200 वि0पू0 के पहले कभी नहीं लाया जा सकता।

दीक्षित का मत–

महाराष्ट्र के विख्यात ज्योतिर्विद पण्डित शंकर बालकृष्ण दीक्षित ने ज्योतिष गणना के आधार पर ऋग्वेद का निर्माण काल 3500 वि0पू0 माना है। शतपथ ब्राह्मण में कृत्तिकाओं के ठीक पूर्वी बिन्दु पर उचित होने का वर्णन है परन्तु आजकल वे पूर्वी बिन्दु से कुछ उत्तर और हट कर उचित होती है। ज्योतिष की गणना के आधार पर दीक्षित जी का यह कहना है कि कृत्तिकाओं की पूर्व–वर्णित स्थिति 3000वि0पू0 पहले रही होगी। अतः इसे शतपथ ब्राह्मण का निर्माण–काल माना जा सकता है। तैत्तिरीय संहिता में भी इन नक्षत्रों का वर्णन है। यह संहिता निश्चय ही शतपथ से प्राचीन है। ऋग्वेद तैत्तिरीय से भी प्राचीन है। यदि इन संहिताओं के निर्माण–काल में 250 वर्षों का अन्तर माना जाय तो ऋग्वेद की रचना शतपथ से 500 वर्ष पहले 3500 वि0पू0 में हुई होगी। दीक्षित जी इस समय को निचली सीमा मानते हैं। वैसे वे ऋग्वेद की रचना का समय 5500 वि0पू0 तक स्वीकार करने के पक्ष में हैं।

लोकमान्य तिलक का मत–

ज्योतिष गणना के आधार पर लोकमान्य तिलक ऋग्वेद के रचना–काल को और भी प्राचीन सिद्ध करते हैं। उनके मत का मूल आधार ऋग्वेद तथा तैत्तिरीय संहिता में उल्लिखित मृगशिरा नक्षत्र में वसंत सम्पात है। उनका कहना है कि यह वसन्त सम्पात गणना के आधार पर कृत्तिका से 2000 वर्ष पहले पड़ता है। अतः संहिताओं की रचना 5000 वि0पू0 में हुई होगी। ऋग्वेद चूँकि सभी संहिताओं में प्राचीन है अतः इसकी रचना लगभग 6000वि0पू0 में हुई होगी। इस प्रकार गणना के आधार पर उन्होंने वैदिक साहित्य का काल–क्रम से चार विभाग किया–

1. **अदितिकाल (6000 से 4000 वि0पू0 तक)–** देवताओं के नाम, गुण तथा उनके चरित्र का वर्णन करने वाले विधि–वाक्य रूप–मंत्रों (निविदों) की रचना इसी युग में हुई होगी। अदिति को देवताओं की जननी कहा गया है अतः देवताओं की कल्पना इसी युग में हुई होगी।
2. **मृगशिरा काल (4000 से 2500 वि0पू0)–**अधिकांश वैदिक मंत्र इसी काल में रचे गये होंगे।
3. **कृत्तिका काल (लगभग 2500 से 1400 वि0पू0 तक)–**तैत्तिरीय संहिता तथा ब्राह्मणों में सर्वप्राचीन शततथ की रचना इसी युग में हुई होगी। वेदांग ज्योतिष का रचना–काल गणितीय गणना के आधार पर 1400 वि0 के ही लगभग पड़ता है।

4. **अन्तिम काल (1400 से 500 वि0पू0 तक)**–एक हजार वर्षों के इस काल के बीच श्रौत तथा गृह्य सूत्रों और दार्शनिक ग्रंथों की रचना हुई।

लोकमान्य तिलक का यह मत ज्योतिष गणना पर आधारित होते हुए भी एक अतिरेक पूर्ण कल्पना प्रस्तुत करता है। पाश्चात्य विद्वान् इतने धैर्य और इतनी श्रद्धा से युक्त नहीं हैं जितने भारतीय। अतः उन्हें यह मत ऐतिहासिक तथ्यों से कोसों दूर दिखायी पड़ता है।

शिलालेखों से प्राप्त सूचना–

सन् 1907 में डॉ0 ह्यूगो विन्कलर को एशिया माइनर (टर्की) के बीघाजकोइ नामक स्थान पर एक शिलालेख प्राप्त हुआ। इस शिलालेख में हित्ताइत एवं मितन्नी दो जातियों के बीच हुई संधि का उल्लेख है। ईंटों पर लिखे गये ये संधि लेख दोनों जातियों के परस्पर कलह को शांत करने के लिए लिखे गये थे। संधि के साक्षी के रूप में यहाँ कुछ देवताओं का उल्लेख हुआ है। इन देवताओं में दोनों जातियों के अपने जातीय देवताओं के अतिरिक्त मित्र, वरुण, इन्द्र तथा नौसत्यौ का उल्लेख हुआ है। इस शिलालेख का समय 1400 ई0पू0 निश्चित है। अब प्रश्न यह उठता है कि यहाँ प्रमुख वैदिक देवताओं का उल्लेख कैसे हुआ? क्या एशिया माइनर की ये दो जातियाँ आर्यशाखा से ही सम्बन्धित थीं? या आर्य धर्म को मानने वाले कुछ लोग एशिया माइनर में जा बसे थे? कुछ भी हो इन उल्लेखों से इतना तो निश्चित हो ही जाता है कि संधि–लेख में उल्लिखित इन देवताओं की परिकल्पना आर्य जाति में बहुत पहले ही हो चुकी होगी।

इस प्रकार पाश्चात्य विद्वान् वेदों का निर्माण–काल 2000 से 2500 तक मानने लगे हैं। इस मत का प्रचार होते ही धीरे–धीरे तिलक के मत को भी मान्यता दी जाने लगी है। उनकी ज्योतिष–गणना में अब पाश्चात्य विद्वान् भी विश्वास करने लग गये हैं।

ऋग्वेद के रचना–काल का निर्धारण करने में अनेक पाश्चात्य और भारतीय विद्वानों ने प्रयास किया है। उनके समस्त मतों का उल्लेख यहाँ असंभव है। डॉ0 अविनाशचन्द्र ने अपने 'वैदिक इंडिया' ग्रन्थ में भौगोलिक एवं भूगर्भ सम्बन्धी तथ्यों के आधार पर ऋग्वेद का रचना–काल 25000ई0पू सिद्ध करने का प्रयास किया। इसी प्रकार पं0 दीनानाथ शास्त्री ने अपने 'वेदकाल निर्णय' नामक ग्रन्थ में वेदों का काल तीन लाख वर्ष पूर्व सिद्ध करने का प्रशंसनीय प्रयत्न किया।

उपर्युक्त उल्लेख के आधार पर यह सिद्ध हो जाता है कि वेदों का निर्माण काल अत्यन्त विवादास्पद है। विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रतिपादित तिथियों में इतना अन्तर है कि उनका समन्वय करना अत्यन्त कठिन है। लोकमान्य तिलक और एशिया माइनर के लेखों के आधार पर वेदों का निर्माण–काल 2000ई0पू0 के पहले कभी भी रखा जा सकता है। लेकिन इसके पश्चात् रखना किसी भी प्रकार सम्भव नहीं। मैक्डोनेल ने भी 2000 और 1500 ई0पू0 के बीच वेदों की रचना और उनका विस्तार स्वीकार किया है। यही मत आजकल लगभग सभी को मान्य है।

5.8 आरण्यक साहित्य–

आरण्यक का अर्थ–

सायण ने तैत्तिरीय और ऐतरेय आरण्यकों के भाष्य में आरण्यक का अर्थ किया है– जो अरण्य में पढ़ा या पढ़ाया जाये, उसे आरण्यक कहते हैं। इसमें आत्म–विद्या, तत्त्व–चिन्तन एवं रहस्यात्मक विषयों का वर्णन है, अतः गोपथ ब्राह्मण (2–10) और बौधायन–धर्मसूत्र–भाष्य (2–8–3) में आरण्यकों को रहस्य–ग्रन्थ' कहा गया है।

ये ग्रन्थ गृहस्थ–जीवन से निवृत्त वानप्रस्थों के लिए थे। जो वन में रहकर मनन, चिन्तन, स्वाध्याय, जप, तप एवं धार्मिक कार्यों में संलग्न रहते थे। ऐसे विषयों के लिए नगरों का वातावरण अनुपयुक्त था।

प्रतिपाद्य विषय–

आरण्यक ग्रन्थ उपनिषदों के पूर्व रूप हैं। उपनिषदों में आत्मा, परमात्मा, सृष्ट्युत्पत्ति, ज्ञान, कर्म, उपासना एवं तत्त्व–ज्ञान का प्रतिपादन है। उसी तत्त्व–चिन्तन का प्रारम्भ हम आरण्यकों में पाते हैं। आरण्यकों में वैदिक यागों का आध्यात्मिक एवं तात्त्विक स्वरूप बताया गया है। '**विष्णुर्वै यज्ञः**' के द्वारा यज्ञ को विष्णु या ब्रह्म का स्वरूप माना गया है। यज्ञ की व्याख्या ब्रह्म की व्याख्या है। अतएव **यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म**' कहा गया है।

यज्ञ को सृष्टि का नियन्ता माना है। आरण्यकों में यज्ञ का दार्शनिक रूप, आत्मविवेचन, तत्वमीमांसा, ज्ञान, कर्म और उपासना का समन्वय, वर्णाश्रम–धर्म, निष्काम कर्मयोग तथा प्राण–विद्या आदि का वर्णन है।

आरण्यकों का संक्षिप्त परिचय–

ऋग्वेदीय आरण्यक–

ऋग्वेद के दो आरण्यक ग्रन्थ प्राप्त होते हैं– 1. ऐतरेयारण्यक, 2. शांखायन आरण्यक।

1. **ऐतरेयारण्यक–**इसमें 18 अध्याय हैं, जो पाँच भागों में विभक्त हैं। इन भागों को आरण्यक कहते हैं। इसमें उक्थ (निष्कैवल्य शास्त्र) महाव्रत, प्राण–विद्या और पुरुष का विवेचन है।
2. **शांखायन आरण्यक–**इसमें 15 अध्याय हैं। इसके 3 से 6 अध्यायों को कौषीतकि उपनिषद् कहते हैं। इसमें महाव्रतों आदि का वर्णन है। इसमें काशी, विदेह, कुरु–पांचाल आदि का उल्लेख है।

शुक्ल–यजुर्वेदीय आरण्यक–

शुक्ल यजुर्वेद का वस्तुतः कोई आरण्यक नहीं है। शतपथ–ब्राह्मण की माध्यन्दिन और काण्व दोनों शाखाओं के अन्तिम 6 अध्यायों को बृहदारण्यक–उपनिषद् कहते हैं। इसमें बीच–बीच में यज्ञों के रहस्य का वर्णन है, अतः इसे आरण्यक कहा जाता है। परन्तु इसमें उपनिषदों का प्रतिपाद्य विषय अधिक है, अतः इसे नाम से आरण्यक होने पर भी उपनिषद् ही गिना जाता है।

कृष्ण यजुर्वेदीय आरण्यक–

कृष्ण यजुर्वेद के दो आरण्यक मिलते हैं– 1. तैत्तिरीय आरण्यक, 2. मैत्रायणीय आरण्यक।

1. **तैत्तिरीय आरण्यक**—यह कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा का आरण्यक है। इसमें 10 परिच्छेद या प्रपाठक हैं। इसमें अग्नि की उपासना, इष्टका चयन, स्वाध्याय, पंच महायज्ञ, अभिचार मंत्र तथा पितृमेध आदि का वर्णन हैं। इसमें कुरुक्षेत्र, खाण्डव, पांचाल आदि भौगोलिक नामों का भी उल्लेख है। इसमें ही सर्वप्रथम **यज्ञोपवीत'** का निर्देश है। **प्रसृतो ह वै यज्ञोपवीतिनो यज्ञः** । इसके दशम प्रपाठक को **नारायणीय उपनिषद्** कहते हैं।
2. **मैत्रायणीय आरण्यक**— इसको मैत्रायणीय उपनिषद् भी कहते हैं। इसमें 7 प्रपाठक हैं। इसमें आरण्यक और उपनिषद् अंश मिश्रित हैं।

सामवेदीय आरण्यक—

सामवेद के 2 आरण्यक प्राप्त होते हैं—

1. **तलवकार (तवलकार) आरण्यक**— इसको **जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण** भी कहते हैं। इसमें ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् मिले हुए हैं। इसमें अनेक साम—मन्त्रों की सुन्दर व्याख्या है। इसमें 4 अध्याय है। चतुर्थ अध्याय के दशम अनुवाक को **केन उपनिषद्'** कहते हैं।
2. **छान्दोग्य आरण्यक**— इसको सत्यव्रत सामश्रमी ने सामवेद—आरण्यक—संहिता नाम से छपवाया था।

अथर्ववेदीय आरण्यक—

अथर्ववेद का कोई आरण्यक उपलब्ध नहीं है।

5.9 सारांश—

इस इकाई में आपने वैदिक संहिताओं, प्रमुख ब्राह्मण ग्रन्थ, षड्वेदांग का परिचय प्राप्त किया है। साथ ही सूत्र साहित्य वेदों का रचनाकाल एवं आरण्यक साहित्य के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त किया। वैदिक साहित्य का अध्ययन आपके ज्ञान में संवृद्धि करेगा।

5.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें—

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास— बलदेव उपाध्याय
2. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास— कपिलदेव द्विवेदी
3. वैदिक साहित्य और संस्कृति— बलदेव उपाध्याय

5.11 स्वपरख प्रश्न / अभ्यास

1. ऋग्वेद् संहिता के मंडलों की संख्या बताइये?

2. यजुष् का अर्थ स्पष्ट कीजिये?

3. सामवेद के प्रतिपाद्य विषय पर प्रकाश डालिये?

4. वेदांग का अर्थ स्पष्ट कीजिये?

5. श्रौतसूत्र के भेद बताइये?

6.वेदों के रचनाकाल के सम्बन्ध में मैक्समूलर के मत को स्पष्ट कीजिये?

7. ऋग्वेदीय आरण्यक के प्रकार समझाइये?

8. वेदानुसार ब्राह्मणों का वर्गीकरण समझाइये?

9. आरण्यक का अर्थ स्पष्ट कीजिये?

कुछ उपयोगी पुस्तकें–

1. ऋक्सूक्त संग्रह– हरदत्त शास्त्री

2. ऋक्सूक्त संग्रह– तारिणीश झा

3. वैदिक सूक्त संग्रह– डॉ0 विजय शंकर पाण्डेय

4. अथर्ववेद– पं0 श्रीराम शर्मा आचार्य।

5. सामवेद– पं0 श्रीराम शर्मा आचार्य।

6. यजुर्वेद– पं0 श्रीराम शर्मा आचार्य।

7. सामवेद संहिता– पं0 रामस्वरूप शर्मा गौड़

8. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति– आचार्य बलदेव उपाध्याय।

9. निरुक्त– यास्क।

10. संस्कृत साहित्य का इतिहास– डॉ0 शिवमूर्ति शर्मा।

11. ईशावास्योपनिषद्– वाचस्पति उपाध्याय।
12. संस्कृत साहित्य का इतिहास– आचार्य बलदेव उपाध्याय
13. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास– कपिलदेव द्विवेदी